पंजाबवासियों को राशन के कारण चावल खाने के लिये विवश होना पड़ता है, और बंगालवासियों को गेहूं खाने के लिये। नियंत्रण की यह गड़बड़ी तब तक नहीं रोकी जा सकती जब तक नियंत्रण आवश्यक बना रहेगा।

मोटे अनाजों का अवनियंत्रण होने से महीन अनाजों के भी भाव गिर जायेंगे। जापानियों के आक्रमण के समय १९४२ में लाहौर में गेहूं बाज़ार में न आने के कारण सरकार ने उसका अवनियंत्रण कर दिया। पहले तो दाम तिगुने हो गये, पर पीछे नियंत्रित भाव ७ रुपये के स्थान पर १४ रुपये प्रति मन का भाव जम गया, और बहुत सारा गेहूं बाज़ार में आ गया। अतः अवनियंत्रण से पहले तो दाम बढ़ते हैं, पर पीछे गिर जाते हैं। अब: हम मोटे अनाजों से अवनियंत्रण का आरंभ कर सकते हैं। इस कारण भारी कठिनाइयों को कम कर देने वाली इस अवनियंत्रण नीति का सभी स्वागत करेंगे।

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : श्रीमान्, माननीय सदस्यों को इस अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय पर बोलने का अधिकाधिक समय मिल जाये, इस कारण मैं इस विवाद में बाधा देने में हिचकिचा रहा था। मेरे सहयोगी खाद्य मंत्री बाद में विवाद का पूरा-पूरा उत्तर देंगे। कल मेरे सहयोगी वित्त मंत्री ने स्थिति की विशद व्याख्या करते हुए सरकार की बुनियादी नीति स्पष्ट कर दी थी। वह न केवल सरकार की ही ओर से बोले थे बल्कि योजना आयोग की ओर से भी बोले थे—ऐसी बात नहीं कि वे दोनों एक दूसरे से पृथक् और परस्पर विरोधी हैं—फिर भी वे सरकार की ओर से और योजना आयोग की ओर से भी, जिसका काफ़ी बोझ उन पर है, साधिकार रूप में बोले थे। फिर भी मैंने कुछ शब्द कह देना इसलिये तय किया कि लोगों के दिमाग में इस समस्या पर काफी विभ्रम पैदा हो गया है और बहुत सी ऐसी बातें कही गई हैं, जिनका जहां तक सरकार का संबंध है, कोई औचित्य नहीं है। इस कारण भी मैंने सदन में इस विवाद का स्वागत किया था। जब इस सत्र में पहले मुझ से पूछा गया था कि क्या इस पर विवाद होगा, तो प्रश्नकर्त्ता माननीय सदस्य समझ रहे थे कि कुछ भारी परिवर्तन होने जा रहे हैं। वस्तुतः उन्होंने मुझ से पूछा था कि क्या पहले बड़े-बड़े परिवर्तन कर दिये जायेंगे और बाद में क्या पोस्ट मार्टम किया जायेगा। वास्तव में जैसा सदन को पता चलेगा, कोई बड़ा परिवर्तन नहीं होने जा रहा है। कुछ परिवर्तन सुझाये अवश्य जा रहे हैं, पर उनका सरकार द्वारा अब तक अपनाई गई और भविष्य में अपनाई जाने वाली बुनियादी नीति से कोई सम्बन्ध नहीं है। पर यह विभ्रम फैल गया और समाचार-पत्रों के हमारे कुछ मित्रों ने बड़ी-बड़ी शीर्षपंक्तियां निकाल दीं और ऐसी बात की कल्पना की, जो विद्यमान न थी।

यह खाद्य समस्या पिछले कुछ वर्षों से हमारी एक अत्यन्त कठिन समस्या रही है, और जैसा सदन को विदित है, खाद्य मंत्रालय को, वह चाहे किसी के अधीन रहा हो, बहुत भारी झंझटें झेलनी पड़ी हैं। हम सब अर्थात् सरकार और मंत्रि-परिषद् सभी ने खाद्य मंत्रालय के इस भार में कुछ हिस्सा बंटाया है, पर आखिर यह विद्यमान खाद्य मंत्री को ही करना होता है। मेरे अनुमान से हमने पिछले कुछ वर्षों में गलतियां की हैं। हम उनसे लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। यह एक अत्यन्त दारुण स्थिति हो गई है। सब मिलाकर हालत अपेक्षतया कुछ ठीक है—हम अपेक्षतया कुछ अच्छी स्थिति में हैं। वास्तव में इस स्थिति में सरकारी नीति के कारण ही इतना सुधार नहीं हुआ है; अन्य कारण भी हैं। पर कुछ सीमा तक हम यह कह सकते हैं कि यह सरकारी नीति के कारण सुधरी है। और इस सम्बन्ध में मैं अपने सहयोगी खाद्य मंत्री की प्रशंसा

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

करूंगा जिन्होंने इस मुश्किल तथा उलझे हुए प्रश्न को ऐसी शक्ति सामर्थ्य और सजगता के साथ निपटाया है, जिसने मेरे विचार से समूचे देश में सुपरिणाम पैदा कर दिये हैं।

मैं आंकड़ों का ब्यौरेवार विश्लेषण नहीं करना चाहता शायद सदन को उनकी अच्छी खासी खुराक पहले ही मिल चुकी है। पर हमें अप्रधान चीजों के कारण प्रधान चीजें न भुला देनी चाहियें। ऐसे विवाद में प्रत्येक माननीय सदस्य स्वभावतः उस स्थिति की विशेष चिंता करता है, जो उसके राज्य या उसके क्षेत्र विशेष में होती है। और यह ठीक ही है कि वह इस पर जोर दें। फिर भी सब से ज़्यादा महत्व की बात यह है कि हम पूरे देश का चित्र, समूची-खाद्य-समस्या का ध्यान रखें और याद रखें कि हमारी बुनियादी नीति क्या है।

वास्तव में सदन बुनियादी नीति पर चर्चा कर सकता है। जहां तक हमारा सम्बन्ध है इस पर चर्चा करने या इसे बदलने का कोई प्रश्न नहीं उठा है। और जहां तक हम देख सकते हैं, इस बुनियादी नीति को बदलने का प्रश्न उठने की संभावना भी नहीं है। मैं यह भी बता दूं कि आप चाहे जितना अंतर कर दें, चाहे जितनी ढील दे दें, या इधर उधर कुछ परिवर्तन कर दें, पर भले ही खाद्य स्थिति बहुत काफ़ी सुधर जाये, यह बुनियादी नीति चलती ही रहेगी। कुछ भविष्य की ओर देखते हुए मैं तो यहां तक कहूंगा कि हमारे वर्तमान खाद्याभाव के स्थान पर—थोड़ा-बहुत खाद्याभाव तो है ही (यद्यपि उस सम्बन्ध में भी आंकड़ों में अन्तर है) पर हम मान लें कि खाद्याभाव है, किन्तु मैं एक कदम आगे बढ़ कर कहूंगा—कि भले ही खाद्य का अतिरेक हो जाये, यह बुनियादी नीति चलती रहेगी। आप इसका तरीका या बहुत सी बातें बदल सकते हैं, पर मेरे विचार से बुनियादी नीति तो चलती ही रहेगी।

मैं ऐसा क्यों कहता हूं? मेरे सहयोगी वित्त मन्त्री ने योजना के परस्पर सम्बन्ध का निर्देश किया था। वह तो है ही। यदि इसे घरेलू रूप में कहा जाये तो यह राष्ट्र की गृहस्थी चलाने जैसा ही है। अतः भले ही हालत कुछ सुधर जाये, हम राष्ट्र की गृहस्थी का चलाना बन्द नहीं कर सकते। वास्तव में यदि गृहस्थी चलाने का तरीका गलत है, तो हमें इस तरीके को सुधारना होगा। पर खाद्य के संभरण और जीवन की अन्य आवश्यकताओं के बारे में यदि हमें कुछ योजना बनानी है तो हमें पूरे समुदाय की गृहस्थी का ख्याल रखना होगा। हमें सब से पहले यही नहीं देखना होगा कि वितरण समुचित रूप में होता है और किसी को दूसरे के कारण दुखी नहीं होना पड़ता आदि, पर हमें यह भी देखना होगा कि हम उसमें अपने विकास तथा योजना कार्यक्रमों के लिये पूरा ध्यान रखें। मान लो, हमारा राष्ट्र खाद्य के अतिरेक वाला राष्ट्र हो जाता है, तो हम यह नहीं चाहेंगे कि हम उसका पूरा लाभ न उठायें। हम भोजन स्तर को ऊंचा करना ही चाहेंगे, पर मैं कहूंगा कि उसकी भी कुछ सीमाएं होंगी। चूंकि हमारी विकास की मांग बहुत विशाल है, और हम अपने देश को विकसित करना चाहते हैं। तो यदि आवश्यक हुआ तो बचने वाले अतिरेक का हम निर्यात में उपयोग करना चाहेंगे, जिससे हम मशीनों आदि अत्यावश्यक सामान का अधिक आयात कर सकें,—यद्यपि अभी निर्यात का कोई प्रश्न नहीं है; मैं यह तर्क ही सदन के सामने रख रहा हूं। शायद सदन को याद होगा कि बीसेक वर्ष पहले जर्मनी में 'गोली बनाम मक्खन' वाली बात खूब चली थी अर्थात् तत्कालीन नाजी जर्मनी मक्खन के स्थान पर गोली को अधिक पसन्द करता था, वह

मक्खन का निर्यात कर उस से आये पैसे से गोलियां बनाने की बात कहता था। पर हमें गोली से कोई रुचि नहीं और हम उसके लिये मक्खन भी नहीं छोड़ना चाहते।

अपने आर्थिक विकास के लिये अपेक्षतया अधिक उपयोगी वस्तुओं को प्राप्त करने में संभव है हमें मक्खन छोड़ना पड़े। मेरे विचार से विकास के सम्बन्ध में देश यह मान लेगा कि अपनी भावी उन्नति के लिये अत्यावश्यक कुछ वस्तु प्राप्त करने के लिये हमें आवश्यक पदार्थ सुलभ होने पर भी अपनी निजी दैनिक आवश्यकतायें कम करनी पड़ेंगी। वास्तव में उसकी सीमाएं हैं। हम पूरे समुदाय के लिये भोजन चाहते हैं, अच्छा भोजन, काफी भोजन चाहते हैं और हमें उसका प्रबन्ध करना होगा, पर मैं कोई कारण नहीं देखता कि हम अन्न क्यों विनष्ट करें और ऐसी परिस्थितियों को पनपने दें, जिनसे अन्न नष्ट हो या ऐसा ही कुछ हो जाये। अतः इस सब के लिये गृहस्थी को कुशलतापूर्वक चलाना होगा। मेरे अनुमान से हम में से कुछ लोगों के लिये अपनी गृहस्थी चलाना भी मुश्किल काम है, और मेरे विचार से पूरे राष्ट्र की गृहस्थी का चलाना एक बहुत पेचीदा और मुश्किल बात हो जाती है; पर यह सिद्धान्त तो रहेगा ही कि हम राष्ट्र की गृहस्थी चलायें और इसलिये सदन के सामने बुनियादी बात यही है कि क्या हम इन अत्यन्त महत्वपूर्ण बातों को तथाकथित निजी उपक्रम और बिल्कुल खुले बाजार के हाथ में छोड़ सकते हैं। बिलकुल खुले बाजार और खुले उपक्रम की धारणा आज पुरानी पड़ गई है। वह नियंत्रण के बाहर हो जाता है। और भारत जैसे देश में, जहां हमारे संसाधन सीमित हैं, और जहां हमें उन को बढ़ाना है, हम बिलकुल खुले बाजार और खुले उपक्रम वाली इस बात की अनुमति नहीं दे सकते। पर इसका अर्थ यह नहीं कि किसी भी वस्तु के लिये खुले बाजार की गुंजाइश है ही नहीं। अनिवार्यतः हमें सारभूत पदार्थों को नियंत्रित करना ही होगा, जिससे हम देश की बुनियादी आर्थिक स्थिति को नियंत्रित रख सकें। यही बात खाद्य पर भी लागू होती है। मैं यह नहीं कहता कि खाद्यों के लिये खुला बाजार न हो। निश्चय ही वह हो सकता है। मैं यह कहने को तैयार नहीं कि यह विशेष नियंत्रण दूसरी जगह से न उठा लिया जाये। यह संभव है। यह परिस्थितियों पर निर्भर है। हम उसकी चर्चा कर लें। मैं यह कहने को तैयार हूं कि हमें खाद्य स्थिति पर सुदृढ़ नियंत्रण रखना चाहिए और अन्य बातों के बारे में हमें ऐसी स्थिति में होना चाहिए कि हम परिस्थिति पर तुरन्त नियंत्रण कर सकें। हम वह कैसे कर सकते हैं? यह परिस्थितियों और तथ्यों के विवरण पर निर्भर है। मैं सदन के सामने सेना का रूपक रख सकता हूं। एक सेना एक राज्य या क्षेत्र का नियंत्रण करती है। जो जनरल सेना को प्रत्येक स्वतंत्र नागरिक का नियंत्रण करने के लिये प्रत्येक गांव में बांट देता है, वह बेवकूफ ही होगा। वह स्थिति पर वैसा नियंत्रण नहीं रख सकता जैसा कुछ सामरिक स्थलों पर नियंत्रण करते हुए रख सकता है। वह उन पर पूरा नियंत्रण रखता है तो वह किसी अचानक घटना के होते ही कहीं भी नियंत्रण कर सकता है। यदि वह वस्तुतः सामरिक स्थलों का नियंत्रण रखता है, तो पूरी स्थिति उसके नियंत्रण में है। सामरिक स्थल क्या हैं, इस प्रश्न पर विचार किया जा सकता है। पर बात यह है कि सामरिक स्थलों पर नियंत्रण रखना होगा और हम ऐसी शक्तियों को अनियंत्रित नहीं छोड़ सकते, जो समुचित खाद्य-वितरण आदि की हमारी बुनियादी नीति में उथल-पुथल कर दें। अतः मेरी इच्छा है कि सदन इस बात को अच्छी तरह समझ ले कि अभी या बाद में—जैसी मुझे आशा है—खाद्य स्थिति में निरन्तर सुधार होता रहे, तब भी कोरी आशा पर ही में अपनी

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

नीति आधारित नहीं कर सकता । नीति को आकस्मिक संकट की संभाव्यता या शक्यता पर आधारित करना होगा और सदैव अच्छी फ़सल की आशा में हम सुदृढ़ नीति नहीं रख सकते । पाकिस्तान को ही लें । पाकिस्तान खाद्य के सम्बन्ध में तीन चार वर्ष खूब हरा-भरा रहा । फिर कोरिया युद्ध के कारण दाम बढ़ गये और उन्होंने खूब पैसा कमाया तथा खाद्य के विषय में पाकिस्तान और भारत की तुलना में भारत को नीचा बताया गया । उनकी नीति की आलोचना मेरा काम नहीं । मुझे ब्यौरे पता नहीं, पर यह स्पष्ट है कि एक बुरी फ़सल ने इस वर्ष वहां बिलकुल उथल-पुथल कर दी है । खाद्य के विषय में उनकी खूब छीछालेदार हुई, कल के खाद्य के अतिरेक वाले देश में आज सहसा खाद्याभाव हो गया और उसे दुनियां के सुदूर कोनों से खाद्य मंगाना पड़ा । अतः हम अपनी नीति आशाओं ही पर आधारित नहीं कर सकते । हमें उसे समझने के लिये तैयार रहना चाहिए । हमें यह संभावना रखते हुए नीति बनानी चाहिए कि अचिंतित घटनाएं घट जायेंगी । एक कदम और आगे बढ़कर मैं कहूंगा कि हमें पूरा संतोष भी हो कि हमारी आशाएं पूरी हो जायेंगी और परिस्थितियां दिन-दिन सुधर रही हों, तब भी हम प्रत्येक दृष्टिकोण से सारभूत पदार्थों का ध्यान नहीं छोड़ सकते । अतः मैं यह स्पष्ट कर देना चाहूंगा कि खाद्य स्थिति पर अत्यावश्यक नियंत्रण रखने ही पड़ेंगे ।

अब एकमात्र विचारणीय प्रश्न यही है कि उन अत्यन्त महत्वपूर्ण नियंत्रणों को कैसे लगाया जाये, और महत्वहीन नियंत्रणों को समय-समय पर कैसे शिथिल किया जाये । यह वस्तुतः एक ब्यौरे की बात है, यद्यपि यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विवरण है और यह ध्यान रखना होगा कि उससे महत्वपूर्ण नियंत्रणों पर तो कहीं प्रभाव नहीं पड़ता । अब इसका अर्थ निश्चय ही यह नहीं कि पूरे देश के लिए बिलकुल एकरूप नीति अपनाना अत्यावश्यक है । विभिन्न राज्यों की दशाओं में अंतर है और उस बुनयादी बात को ध्यान में रखते हुए हमें उन परिस्थितियों के अनुकूल बनना पड़ेगा । बुनियादी नीति वही है, पर किसी राज्य या देश के किसी भाग में उसके लागू किये जाने में अनेक स्थितियों के कारण अन्तर हो सकता है । इसे याद रखना होगा, क्योंकि मैं देखता हूं कि इस बुनियादी नीति के राज्य या क्षेत्र विशेष में विशिष्ट प्रवर्तन को लेकर कुछ विभ्रम चल रहा है । यह प्रवर्तन अनेकों कारणों पर निर्भर होगा, जो उस राज्य के लिए विशिष्ट हैं और विशेषतः खाद्य स्थिति के संबंध में । पर कुछ अन्य बातों पर भी विचार करना होगा । और इन महत्वपूर्ण नियंत्रणों को भी यदि आप बहुत अधिक फैला देंगे, तो सैनिक नियंत्रण की भांति इसका अर्थ होगा कम नियंत्रण रहना । मैं सेना की तुलना को ले रहा हूं । फैली हुई सेना कमज़ोर सेना होती है । वह स्थिति पर नियंत्रण नहीं रख पाती । अतः उस पर इस दृष्टि से विचार करें । मैंने सुना था कि उस दिन एक राज्य सरकार लगभग १५,००० जवान लड़कों पर मुट्ठी भर चावल या गेहूं इधर से उधर ले जाने के तुच्छ से अपराध पर मुकद्दमा चला रही है । यह एक अपराध है । पर यदि एक राज्य छोटे बच्चों को पकड़ने में सारी शक्ति व्यय करता है, तो यह तरीका ही कुछ गलत है । नियंत्रणों में कुछ त्रुटि नहीं है । यह अलग बात है कि शक्ति के इस अपव्यय में कुछ त्रुटि हो और विशेषतः तब जब कि बड़े-बड़े दोषी साफ बच जाते हैं । मैं फिर दुहरा दूं कि किसी ऐसी प्रक्रिया का अपनाना अधिक अच्छा रहेगा जिसमें नियंत्रण महत्वपूर्ण पदार्थों पर रहे और प्राविधिक-उल्लंघनों पर ही प्रत्येक लड़के लड़की को पकड़ लेना जरूरी न हो जाये ।

सदन के सामने रखे गये प्रस्ताव में एक छोटा सा उपबन्ध जोड़ा गया है कि सिर के बोझ जितना अनाज ले जाने में कोई रोक न रहेगी — इन सिर के बोझों से देश की सामान्य खाद्य स्थिति में अन्तर नहीं पड़ जायेगा . . . . . .

श्री टी० के० चौधरी (बरहामपुर) : क्या सभी अनाजों के सिर पर ले जाने लायक बोझों के ले जाने की अनुमति है या केवल ज्वार के ?

श्री जवाहरलाल नेहरू : यह केवल ज्वार पर लागू होता है । लोग सिरों के बोझ के रूप में चाहे जितना ले जायें, उससे स्थिति पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता । उसकी बात ही सोचना बेकार है । हम सब इस राज्य या उस राज्य की बात करते हैं और एक प्रवृत्ति यह देखी जाती है कि प्रत्येक राज्य अपने को शेष से अलग समझ ले लेकिन राज्यों की सीमाओं के निकट रहने वाले निर्धन लोग ऐसी बात नहीं सोचते । दूसरी ओर उनके नातेदार हो सकते हैं; सब से पास का बाज़ार सीमा के उस पार हो सकता है और स्वभावतः वे वहां जायेंगे । अतः सीमा पर के सामान्य कृत्यों में हम जितनी कम बाधा दें, उतना ही अच्छा है । यह बेकार का बोझ है और अपनाये जाने वाली बुनियादी अर्थ-व्यवस्था पर बिना कोई प्रभाव डाले इससे बेकार की परेशानी में डालने वाली स्थिति पैदा हो जाती है । आप इसकी तुलना अन्यत्र खोज सकते हैं । उस अर्थ में यदि आप इधर उधर नियंत्रण की लगाम कुछ ढीली भी कर देते हैं, और यदि इससे स्थिति के बुनियादी नियंत्रण पर प्रभाव न पड़े, तो यह अच्छा ही है । समय-समय पर आप इसकी जांच करते रहें और परिस्थिति की दृष्टि में इधर-उधर कुछ आवश्यक नियंत्रण वा ढील देते रहें, पर यह सदा याद रखना होगा कि बुनियादी नीति वही बनी रहे ।

इस समय हम गेहूं-चावल की चर्चा नहीं कर रहे हैं । यह बिलकुल स्पष्ट हो जाना चाहिए कि पहले जैसी स्थिति बनी रहने पर इस बात का गेहूं-चावल से कोई सम्बन्ध नहीं है । हम ज्वार की चर्चा कर रहे हैं । ज्वार हमारी खपत का काफी अच्छा अंश लगभग ४० प्रतिशत है । कुछ भी सही, सामान्यतः स्थानीय खपत के लिए ज्वार वहीं पैदा कर लिया जाता है । स्थानीय रूप से ज्वार की बहुत काफी खपत होती है । ज्वार का व्यापार चावल-गेहूं के व्यापार से कहीं कम होता है और इसने स्थिति पर उतना प्रभाव नहीं डाला जितना चावल-गेहूं के व्यापार ने । हमारी खाद्य सम्बन्धी खपत का ४० प्रतिशत होते हुए भी—यह बात पीछे सुधारी जा सकती है—राशन-प्रणाली में वस्तुतः ८ प्रति शत ज्वार ही लिया गया है ।

खाद्य तथा कृषि मंत्री (श्री किदवई) : केवल सात प्रतिशत का ही समाहार किया गया था ।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं बस यही कह रहा हूं कि हम जो भी पग उठायें, वह साधारण स्थिति और गेहूं तथा चावल की स्थिति को दृष्टि में रखते हुए ही उठायें । जहां तक कहा जा सकता है, ज्वार की स्थिति का प्रभाव पड़ता तो है, पर बहुत अधिक नहीं । यदि आप, जैसा कि प्रस्ताव है, ज्वार के सम्बन्ध में भी राज्यों की सीमाएं मानें; और केवल आंतरिक खुले व्यापार की ही अनुमति रहे तथा केवल एक राज्य सरकार को दूसरी राज्य सरकार से खरीद करने की ही अनुमति रहे, तो वस्तुतः आप ज्वार की स्थिति के ऊपर भी काफी नियंत्रण रखते हैं, यद्यपि ज्वार की स्थिति का समूची स्थिति पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता । इसका थोड़ा प्रभाव पड़ता है, पर गेहूं-चावल जितना नहीं, भले ही यह कुल खपत का ४० प्रतिशत ही क्यों न हो । और आप उस पर भी नियंत्रण रखते हैं । अतः हम जो पग उठा रहे हैं, वह बृहत्तर नीति की दृष्टि में काफी सुरक्षित पग है । साथ ही इस से

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

छोटी-मोटी परेशानियां और दिक्कतें बहुत कुछ कम हो जाती हैं । यह हमें स्थिति के निरीक्षण का काफी अवसर देता है और यदि स्थिति अनकूल नहीं रहती, तो पीछे लौटने या और कुछ करने का मार्ग हमारे लिए खुला रहता है । सदन के निकट मेरा सुझाव है कि यह बहुत अच्छी नीति है । मैं समझता हूं कि उस सम्बन्ध में एक संशोधन रखा गया है, जिसमें नियंत्रणों की साधारण नीति को स्वीकार करते हुए उन्हें उचित ठहराया गया है और उस बुनियादी नीति को ध्यान में रखते हुए कुछ संशोधन भी उचित ठहराये गये हैं । संशोधन यों हैं :

"और उसका विचार करने के बाद यह सदन खाद्यान्नों के साधारण नियंत्रण के सम्बन्ध में सरकार की नीति का अनुमोदन करता है और बुनियादी लक्ष्य में बाधा डाले बिना स्थानीय या अस्थायी दशाओं के अनुकूल उस में समायोजन करने की सरकार की इच्छा का स्वागत करता है ।"

मेरी समझ से यह संशोधन सरकार की स्थिति पर ठीक प्रकाश डालता है ।

श्री एस० एस० मोरे (शोलापुर) : नियंत्रण के उपलक्षित अर्थ से ही सब स्पष्ट रहते हुए क्या संशोधन का पिछला भाग आवश्यक है ?

श्री जवाहरलाल नेहरू : यह शब्द-चुनाव की बात है । मैंने उसका आलेख नहीं बनाया । मैं इसे इसी रूप में चाहूंगा, यह काफी ठीक है । शब्दों में कुछ अन्तर हो सकता था, पर वह विशेष महत्व की बात नहीं । मुख्य बात यह है कि सदन इस पर अधिक ज़ोर दे कि अन्नों के नियंत्रण की बुनियादी बात अपरिवर्तित ही रहती है । साथ ही यह मानते हुए कि हमारी नीति कोरी सिद्धान्तवादी नीति ही नहीं है, जिसका परिवर्तित स्थिति और दशाओं से सम्बन्ध न हो और जो परिणाम की चिन्ता किये बिना केवल जनता को कष्ट ही देना चाहती हो, बुनियादी बात को ध्यान में रखते हुए समय समय पर हम इसमें कुछ समायोजन करते रहते हैं ।

पंडित एल० के० मैत्रा (नवद्वीप) : श्रीमान्, स्पष्टीकरण के लिये । नई योजना के चालू करने के प्रभाव प्रधान मंत्री ने बताये, पर क्या इससे साधारण उपभोक्ता पर कुछ प्रभाव पड़ेगा ? देश में राशन वाले क्षेत्र में कुल १२ प्रतिशत लोग ही रहते हैं । राज्यों के खाद्य मंत्री इन लोगों की आवश्यकता पर ही ध्यान रखना काफी समझते हैं । कलकत्ते में चावल १७॥) मन रहता है और उससे दस मील दूर देहात में ३०) से ३८) तक; जब कि क्रय-शक्ति कलकत्ते में ही अधिक है । इस प्रकार ८८ प्रतिशत जनता को राशन वाले क्षेत्र से दुगुने दाम तक देने पड़ते हैं । कभी-कभी इन क्षेत्रों में संशोधित राशन-प्रणाली के अधीन कुछ वर्गों को—एक सीमित प्रतिशतक को—कुछ सस्ता राशन मिल जाता है । खाद्य मंत्री तथा अन्य मंत्रियों के भाषण के बाद भी यह स्पष्ट नहीं हुआ है कि राशन के क्षेत्र के बाहर के लोगों को क्या नई योजना से कुछ लाभ होने जा रहा है । आशा हो चली थी कि अन्तर्राज्यिक बंधन उठ जाने से शायद दाम कुछ गिर जायेंगे (अंतर्बाधाएं) . . . .तो क्या प्रधान मंत्री इस दिशा में कुछ प्रकाश डालेंगे ।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मेरे विचार से पंडित मैत्रा द्वारा उठाई गई बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है और ध्यान में रखी जानी चाहिए । केवल १०–१५ प्रतिशत जनसंख्या को ही ध्यान में रखते हुए और शेष सब को भुला कर हम काम नहीं चला सकते । पर दूसरे लोगों में अधिकांश अन्न पैदा करने वाले लोग हैं । वास्तविक कठिनाई उन लोगों को है, जो न

अन्न पैदा करने वाले हैं, न नगर निवासी और न राशन-क्षेत्र के निवासी। यह कठिनाई उनको है। हम जो भी नीति बनायें, उस में हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि इन लोगों के लिये भी दाम कम रहें। प्रत्यक्ष ही माननीय सदस्य द्वारा सुझाई गई बात ध्यान में रखनी होगी। इस पर अमल कैसे हो, यह अलग बात है। वस्तुतः मान लो राज्यों में ज्वार के लाने ले जाने पर खुली छूट है, उससे ही जहां तक ज्वार का संबंध है, शायद दाम सर्वत्र एक से रहेंगे। दूसरी बात भी ध्यान में रखनी होगी, पर मेरा मतलब यह था कि कंट्रोल रखने पड़ेंगे, क्योंकि आखिर हम यह सब किस लिये कर रहे हैं ? इसीलिये न कि हम जल्दी से जल्दी अपने देश में काफी अन्न पैदा कर के और उसे उचित रूप में वितरित कर के खाद्यान्नों के आयात में कमी कर दें।

माननीय सदस्य डा० लंका सुन्दरम् ने मुझे मेरे एक पुराने वक्तव्य—बार-बार दुहराये गये वक्तव्य—की याद दिलाई थी, जो मैंने तीन वर्ष पहले दिया था, और जो मार्च या अप्रैल, १९५२ तक खाद्य-आयातों को समाप्त कर देने के सम्बन्ध में था। मुझे याद नहीं, १९४९ या १९५० में मैंने यह वक्तव्य दिया था, पर मैंने वह वक्तव्य पूरे सच्चे दिल से दिया था, और हम सब प्रकार से वैसा करने के लिये प्रयत्न करना चाहते थे, पर खेद है कि मेरी बात गलत हो गई, और इस प्रकार का एक प्रण सा देश के सामने करने के लिए मुझे शर्म आई, इसी कारण अब किसी प्रकार का निश्चित वक्तव्य देने या प्रण करने की मेरी कोई इच्छा नहीं है (अंतर्बाधाएं) पर मैं नहीं समझता कि हम यह क्यों न कहें कि हम आयातों को कम करने का पूरा यत्न करेंगे और योजना-काल में संभव हुआ तो भारी संकट काल की बात छोड़ उनको समाप्त कर देंगे। यह हमारा विचार है, और आंकड़े बता रहे हैं कि यह हो सकना संभव है। बस मैं इतना ही कह सकता हूं। और रहा "क्रमिक अवनियंत्रण", सो उसे मैं "क्रमिक समायोजन" कह कर पुकारूंगा पर महत्वपूर्ण स्थितियों को सदा नियंत्रण में रखना होगा, अन्यथा आप केवल बाहरी प्रगति ही कर सकेंगे।

श्री टी० के० चौधरी: एक दूसरा स्पष्टीकरण मुझे यह कराना है कि देहाती क्षेत्र तथा घाटे वाले राज्यों में नियंत्रण का अर्थ 'समाहार' होता है और वह नियंत्रणों के रहते आवश्यक भी है, पर क्या सरकार अपनी खाद्य-समाहार-प्रणाली का पूरा-पूरा पुनरीक्षण करने का कोई विचार कर रही है ?

श्री जवाहरलाल नेहरू: मेरे विचार से वित्त मंत्री द्वारा भी यह स्पष्ट कर दिया गया था कि सर्वत्र एकरूप-समाहार प्रणाली रखना बहुत मुश्किल है और मेरे विचार से अवांछनीय भी है। दशाएं विभिन्न हैं और दूसरे हमें इस सम्बन्ध में राज्य सरकारों के द्वारा काम करना होता है और प्रायः राज्य-सरकारें ही इस सम्बन्ध में विचार और निश्चय करती हैं। निःसन्देह समाहार चालू रखना होगा। और मैं तो यह भी कहूंगा यह कहना परस्पर विरोधी नहीं है कि नियंत्रण न रहने पर भी हमें समाहार की आवश्यकता रहेगी। हमारे हाथ में काफी भंडार रहने चाहिएं। हमें घाटे वाले क्षेत्रों में भंडार भेजने होंगे। देश में प्रत्यक्ष ही घाटे वाले क्षेत्र हैं। साधारणतः दशाएं सुधरी हैं, पर उदाहरण के लिए मद्रास राज्य में स्थिति कई वर्षों से लगातार बुरी है और अब भी पानी न बरसने से कुछ महीनों तक यह बुरी ही बनी रहेगी और हमें उसके लिये प्रबंध करना होगा। कर्नाटक के कुछ जिले और देश के कुछ भाग घाटे वाले क्षेत्र हैं। वहां पानी नहीं बरसा या ऐसा ही और कुछ हो गया है। हमें उनको अन्न देना होगा यह कहां से दिया जायेगा। प्रकट है कि या तो विदेशी क्रय से या स्थानीय समाहार से। हम विदेश से खाद्य-आयात कम करना चाहते हैं। और सब कुछ हम विदेश से ही नहीं खरीद सकते। अतः समाहार चलाना ही

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पड़ेगा और भंडार रखने ही पड़ेंगे, भले ही स्थानीय नियंत्रण का तरीका कुछ भी हो। यह तो समायोजन और उपयुक्तता की बात है।

श्री बंसल (झज्जर-रेवाड़ी): जैसा सदन के नेता ने कृपया स्पष्ट कर दिया है, यह नियंत्रण और अवनियंत्रण का विवाद नहीं, बल्कि प्रश्न यह है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था के लिए नियंत्रण का स्वरूप क्या हो। वित्त मंत्री ने विकास-कार्यक्रम के कारण कल नियंत्रणों को आवश्यक माना था, मुझे आशा है कि अपनी उस बात को निभाते हुए वह विनियोजन बढ़ाकर नियंत्रण को आवश्यक बना देंगे।

ये नियंत्रण युद्धकालीन संकट का सामना करने के लिए शुरू किये गये थे। अब हमें सावधानीपूर्वक उनका स्वरूप अपनी विकासशील अर्थव्यवस्था के अनुकूल बनाना पड़ेगा। आंकड़े बताते हैं कि १९४६ से खाद्य का आयात निरन्तर बढ़ता ही रहा है और आज तक ९०० करोड़ रुपयों से अधिक के खाद्य का आयात किया गया है, जो हमारी विकास योजना का लगभग ७५ प्रतिशत है। यदि ऐसा ही चलता रहा, तो हमारी योजना का क्या बनेगा? दूसरे ये नियत्रण दिन-दिन बढ़ने वाली आर्थिक सहायता के आधार पर रखे गये हैं, आंकड़े यों हैं:

१९४६–४७	२२	करोड़ रुपये
१९४७–४८	१७	" "
१९४८–४९	२६.९३	" "
१९४९–५०	२१.१५	" "
१९५०–५१	१५.३२	" "
१९५१–५२	५७.६३	" "
१९५२–५३	(लगभग १५)	" "

अर्थात् १९४६ से अब तक कुल मिला कर लगभग १७५ करोड़ रुपये इसके ऊपर व्यय किये जा चुके हैं। और १९५१ में प्रकाशित आंकड़ों के अनुसार संविहित राशन-क्षेत्र की ४ ६ करोड़ जनता के लिए ही यह व्यय किया गया है। १० प्रति शत लोगों के लिए यह गणना-रेखा बनाये रखना कहां तक उचित है? कांग्रेस की योजना उपसमिति में भी मैंने यह सुझाव दिया था कि खाद्य जैसी महत्वपूर्ण वस्तुओं पर नियंत्रण रहना चाहिए, पर उसका स्वरूप हमें उपर्युक्त सारी बातों को ध्यान में रखते हुए निश्चित करना होगा।

हमें यह नियंत्रण भारी लागत पर रखने पड़े हैं। ऐसी बात नहीं कि नियंत्रण के कारण आयात जरूरी हो गये। पर अब समय आ गया है कि हम इस भारी लागत को कम करने के तरीके सोचें। माननीय योजना मंत्री ने आयात कम करने की बात कही थी, पर वैसे ही वायदे पहले भी तो किये गये थे।

तथ्यों द्वारा यह भी सिद्ध नहीं किया जा सकता है कि नियंत्रण के कारण इस देश में खाद्य का उत्पादन बढ़ गया है। नियंत्रण ढीले करने से उद्योगों में उत्पादन बढ़ गया है। वैसा करने से खाद्यान्नों का उत्पादन भले न बढ़े, पर नियंत्रण के कारण उसका उत्पादन गिरा हुआ अवश्य दिखाई देता है।

इसके पश्चात् सदन की बैठक मध्यान्ह भोजन के लिये ढाई बजे तक के लिए स्थगित हो गई।

मध्यान्ह भोजन के बाद सदन की बैठक ढाई बजे पुनः समवेत हुई।

[**उपाध्यक्ष महोदय** अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

श्री बंसल: नियंत्रणों ने राशन-क्षेत्रों में गणना-रेखा को एक विशेष स्तर पर बनाये रखने में भले ही सहायता दी हो, पर हमारी साधारण अर्थ-व्यवस्था में दामों पर इससे कोई प्रभाव नहीं पड़ा है। अनियंत्रित वस्तुओं के दाम क्रमशः बढ़ते ही रहे हैं।

ऐसी राशन प्रणाली में परिवर्तन होना ही चाहिए था। वित्त मंत्री ने सब से पहले खाद्य पर से अर्थ सहायता उठा ली। फिर मद्रास में कंट्रोल ढीला किया गया और कुछ